जनसत्ता

हिरासत की सीमा

असम में एनआरसी यानी राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर की सूची जारी होने के बाद जो सवाल खड़े हुए हैं, उनके जवाब के एक निष्कर्ष तक पहुंचने में शायद अभी थोड़ा वक्त लगे। लेकिन इस बीच इसकी जद में आए लोगों के सामने जिस तरह की मुश्किलें खड़ी हुई हैं, उनका हल कानूनी और मानवीय, दोनों लिहाज से तुरंत जरूरी है। हालांकि असम में आ गए विदेशी लोगों के मसले पर जद्दोजहद नया नहीं है और उस पर अमूमन सभी पार्टियां अपनी-अपनी सुविधा के मुताबिक राजनीति करती रही हैं। मगर विदेशी होने की आशंका या आरोप में जिन लोगों को हिरासत में लिया गया, उनके बारे में किसी फैसले तक नहीं पहुंच पाना एक अलग और जटिल समस्या खड़ी कर रहा है। हालत यह है कि पिछले कई सालों के दौरान कितने विदेशी नागरिकों को हिरासत में लिया गया, उनसे जुड़ी बाकी जानकारियों की क्या स्थिति है, इसका कोई ठोस ब्योरा तक जमा कर पाने में सरकारी तंत्र लापरवाह रहा है। यही वजह है कि सोमवार को सुप्रीम कोर्ट ने असम में फिलहाल चल रहे हिरासत केंद्रों और पिछले दस साल के दौरान वहां हिरासत में लिए गए विदेशी नागरिकों की कुल संख्या सहित उनसे जुड़ी सभी जानकारियां मुहैया कराने का निर्देश दिया है।

दरअसल, असम के हिरासत केंद्रों में लंबे समय तक पकड़ कर रखे गए विदेशी नागरिकों की स्थिति को लेकर दायर एक याचिका में कहा गया है कि असम के हिरासत केंद्रों में कैद कर रखे गए विदेशी नागरिकों की स्थिति अच्छी नहीं है। इस पर शीर्ष अदालत ने केंद्र से हिरासत केंद्रों, वहां कैदियों के बंद रहने की अवधि और विदेशी नागरिक अधिकरण के समक्ष दायर उनके मामलों की स्थिति को लेकर विभिन्न ब्योरे मांगे हैं। मुख्य न्यायाधीश रंजन गोगोई ने साफ लहजे में कहा कि अगर कैदियों को किसी अन्य देश की ओर से स्वीकार नहीं किया जाता है तो उन्हें हिरासत केंद्रों में नहीं रखा जा सकता। यह सवाल स्वाभाविक है कि अगर सरकार ने विदेशी होने या अवैध रूप से भारत में प्रवेश करने के आरोप में बड़ी तादाद में लोगों को हिरासत केंद्रों में रखा है, तो उनकी पहचान स्थापित करके कितने लोगों को उनके देश वापस भेजा गया या फिर यहां उन्हें किस आधार पर इतने लंबे समय से हिरासत में रखा जा रहा है। अगर कई ऐसे विदेशियों को सजा काटने के बाद भी हिरासत में रखा गया है, तो इसे किस आधार पर न्यायोचित ठहराया जा सकता है!

जाहिर है, ये सारे सवाल हाल के महीनों में असम में नागरिकता के मसले पर उठे विवाद और इससे जुड़े दूसरे मुद्दों का ही विस्तार हैं। गौरतलब है कि अवैध प्रवासियों की पहचान करने के लिए गठित विशेष न्यायाधिकरण के आदेश के बाद ऐसे करीब नौ सौ लोग विदेशी ठहराए जाने के बाद हिरासत में हैं। दूसरी ओर, एनआरसी में कुछ ऐसे मामले भी सामने आए जिनमें एक ही परिवार के कुछ सदस्यों को विदेशी घोषित कर दिया गया तो कुछ लोगों को यहां का नागरिक माना गया। इसके मद्देनजर सितंबर में सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि हिरासत में लिए गए लोगों को उनके परिवारों से अलग नहीं रखा जा सकता। यह ध्यान रखने की जरूरत है कि पहले एनआरसी की सूची जारी होने और अब हाल में नागरिकता संशोधन विधेयक के प्रावधानों पर कई सवाल उठ रहे हैं। खासतौर पर पूर्वोत्तर के राज्यों में विरोध का जो चिंताजनक स्वरूप उभरा है, उसके मद्देनजर सरकार ने इस समस्या के व्यावहारिक हल के लिए अगर जल्दी पहलकदमी नहीं की तो बाद में इसे संभालने में शायद ज्यादा मशक्कत करनी पड़े।

नागरिकता के मानदंड

विकेश कुमार बडोला

असम में अवैध प्रवासन की स्थिति में देश के विभाजन के बाद भी परिवर्तन नहीं हुआ। तत्कालीन असम सरकार के गृह एवं राजनीतिक विभाग द्वारा विदेशी मुद्दों पर प्रकाशित प्रशासकीय रिपोर्ट के आंकड़ों के अनुसार पूर्वी पाकिस्तान के डेढ़ से दो लाख और बाद में पांच लाख अवैध प्रवासी असम में घुस चुके थे। पूर्वी पाकिस्तान के बांग्लादेश बन जाने के बाद भी भारत सरकार की ओर से असम में अवैध प्रवासियों के प्रवाह में कमी लाने या उस पर प्रतिबंध लगाने के ठोस उपाय नहीं किए गए।

नागरिकता संशोधन विधेयक-2016 आठ जनवरी को लोकसभा से पारित हो गया। इससे पहले यह विधेयक 19 जुलाई 2016 को लोकसभा में पेश किया गया था, जिसका उद्देश्य नागरिकता अधिनियम 1955 में संशोधन करना था। नागरिकता अधिनियम 1955 भारतीय नागरिकता पाने के मानदंडों को स्पष्ट करता है। ये मानदंड हैं- जन्म, वंशानुगतता, पंजीकरण, प्राकृतिक राष्ट्रीयकरण और क्षेत्रीय समावेशीकरण के आधार पर नागरिकता हासिल करना। इसके अतिरिक्त उक्त अधिनियम भारत के कार्डधारी विदेशी नागरिकों के पंजीकरण और उनके अधिकारों को भी विनियमित करता है। इसके तहत भारत के विदेशी नागरिक भारत आने के लिए बहुउद्देश्यीय आजीवन वीजा जैसे कुछ लाभ प्राप्त करने के लिए अधिकृत हैं। जबकि विधेयक के अनुरूप अवैध प्रवासी वे हैं जो वैध पासपोर्ट या यात्रा दस्तावेज के बिना भारत में प्रवेश करते हैं और वे भी हैं जो प्रवासन के लिए स्वीकृत समयावधि के बाद भी भारत में रुके रहते हैं।

अभी नागरिकता विधेयक में जो संशोधन किया गया है, उसके अनुसार भारत में रह रहे या रहने के इच्छुक अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान के हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई अल्पसंख्यकों के लिए प्राकृतिक राष्ट्रीयकरण मानदंड के अनुरूप नागरिकता प्राप्त करने लिए भारत में ग्यारह वर्षीय प्रवासन अवधि के उपबंध को घटा कर छह वर्ष कर दिया गया है। केंद्र सरकार के अनुसार वह भारत के उक्त पड़ोसी देशों में उत्पीड़न झेल रहे गैर-मुसलिम अल्पसंख्यकों को भारत की नागरिकता देने के लिए नागरिकता संशोधन विधेयक पारित करवाना चाहती है।

स्वतंत्रता के तुरंत बाद देश का विभाजन भारत के लिए बहुत बड़ी त्रासदी था। विभाजन के बाद पाकिस्तान मुसलिम राष्ट्र बन गया। जो गैर-मुसलिम अल्पसंख्यक पाकिस्तान में ही रह गए और उन पर पाकिस्तान में दशकों से जो अमानवीय अत्याचार किए गए उसकी परिणति यह हुई कि आज पाकिस्तान में गैर-मुसलिम अल्पसंख्यकों की संख्या बहुत ज्यादा घट चुकी है। इसी तरह पूर्वी पाकिस्तान के विभाजन और बांग्लादेश बनने के बाद भी जो गैर-मुसलिम अल्पसंख्यक बांग्लादेश में बचे, उनका भी तरह-तरह से शोषण किया गया। परिणामतः वहां भी गैर-मुसलिम अल्पसंख्यकों की आबादी बहुत घट चुकी है। जबकि विभाजन के बाद भारत में रह रहे मुसलमानों की आबादी न केवल हिंदुओं की तुलना में अत्यधिक बढ़ी, अपितु उनके जीवन स्तर में भी अनेक प्रकार का सुधार हुआ है।

केंद्र सरकार का यह कदम अच्छा है कि वह विभाजन के पहले और बाद में पाकिस्तान, अफगानिस्तान और बांग्लादेश में ही रह रहे भारतवंशियों की आबादी को भारतीय नागरिकता देने के माध्यम से संरक्षण व सुरक्षा प्रदान करने का प्रयास कर रही है। लेकिन इस संदर्भ में सरकार के सम्मुख अनेक तरह की चुनौतियां हैं। पहली, क्या सरकार द्वारा क्रियात्मक स्तर पर यह सुनिश्चित किया जाएगा कि बांग्लादेश, पाकिस्तान और अफगानिस्तान से केवल और केवल गैर-मुसलिम भारत में प्रवेश कर सकें और उन्हें ही यहां की नागरिकता मिले? दूसरी, क्या भारत में आने, रहने और यहां की नागरिकता प्राप्ति के बाद गैर-मुसलिम अल्पसंख्यक हर प्रकार से भारतीय संस्कृति के संवाहक बन कर राष्ट्र के मान-सम्मान को बढ़ाने और व्यवस्थाओं को सुदृढ़ करने का काम कर सकेंगे? तीसरी चुनौती यह कि क्या इस फैसले से देशवासियों विशेषकर असमवासियों की इस आशंका को दूर करने के प्रयास किए जाएंगे कि नागरिकता संशोधन विधेयक के कानून बनने के बाद बांग्लादेश से जो गैर-मुसलिम भारत आएंगे वे वास्तव में गैर-मुसलिम ही होंगे और लाखों-करोड़ों की संख्या में नहीं होंगे?

इन संभावित चुनौतियों के बारे में केंद्र सरकार को स्पष्टीकरण देना ही होगा, क्योंकि लोकसभा में विधेयक पारित हो जाने के बाद असम में स्थानीय लोगों ने केंद्र सरकार के विरोध में धरना, प्रदर्शन, आंदोलन, बंद आयोजित किया जो अभी भी जारी है। नागरिकता संशोधन विधेयक के कारण जो राज्यव्यापी विरोध और रोष है, उसके मूल में स्थानीय असमिया लोगों की ये आशंकाएं हैं कि नागरिकता कानून में संशोधन के बाद अकेले बांग्लादेश की ओर से जो गैर-मुसलिम भारतीय नागरिकता लेकर भारत में रहने-बसने की इच्छा से असम में प्रवेश करेंगे, उनकी संख्या लगभग उन्नीस करोड़ होगी। यदि इस आंकड़े को सही मानें और इसमें भारतीय नागरिकता लेने की चाह में पाकिस्तान व अफगानिस्तान से यहां प्रस्थान व प्रवास करने वाले संभावित लोगों को भी जोड़ लें तो भारत पर पड़ने वाले भारी जनसांख्यिकी दबाव की कल्पना सहज ही की जा सकती है।

कुछ समय पूर्व असम में राष्ट्रीय नागरिक पंजिका (एनआरसी) में सर्वोच्च न्यायालय की निगरानी में नागरिकता संबंधी जो जानकारियां अद्यतन की गईं उसमें वहां रहे अवैध बांग्लादेशियों की संख्या 40.70 लाख दर्ज की गई थी। यह सर्वविदित है कि राष्ट्रीय नागरिक पंजिका (एनआरसी) असम में रह रहे वास्तविक भारतीय नागरिकों के नामांकन की एक पंजिका है, जिसे पहले-पहल 1951 के बाद तैयार किया गया था। 1951 से भी बहुत पहले 1826 से 1947 के बीच जब असम ब्रिटिश उपनिवेशकाल में कॉलोनिअल असम के रूप में था तब भी वहां विभिन्न प्रांतों से लोगों का प्रवासन होता रहा। सन 1931 में तत्कालीन जनगणना अधीक्षक सीएस मुल्लन ने भी अपनी जनगणना रिपोर्ट में असम में अवैध प्रवासन और प्रवासियों का उल्लेख किया था। उनके अनुसार, 'संभवतः विगत 25 वर्षों के दौरान असम प्रांत में प्रवासियों और शरणार्थियों का आगमन चिंतनीय है। इससे यही लगता है कि यह प्रवासन असम की संपूर्ण पुरातन विशेषता को पूरी तरह बदल देगा। इतना ही नहीं, इससे असम की संस्कृति और सभ्यता की पूर्ण संरचना भूमि पर अतिक्रमण करने की भूखी अप्रवासी जनसंख्या द्वारा बर्बाद कर दी जाएगी।'

असम में अवैध प्रवासन की स्थिति में देश के विभाजन के बाद भी परिवर्तन नहीं हुआ। तत्कालीन असम सरकार के गृह एवं राजनीतिक विभाग द्वारा विदेशी मुद्दों पर प्रकाशित प्रशासकीय रिपोर्ट के आंकड़ों के अनुसार पूर्वी पाकिस्तान के डेढ़ से दो लाख और बाद में पांच लाख अवैध प्रवासी असम में घुस चुके थे। पूर्वी पाकिस्तान के बांग्लादेश बन जाने के बाद भी भारत सरकार की ओर से असम में अवैध प्रवासियों के प्रवाह में कमी लाने या उस पर प्रतिबंध लगाने के ठोस उपाय नहीं किए गए। हालांकि समय-समय पर भारत सरकार ने घुसपैठ की समस्या पर असम के स्थानीय संगठनों (आसू, अगप इत्यादि) के साथ मिल कर रास्ता निकालने का प्रयास तो किया, पर सफलता तब भी नहीं मिली। घुसपैठियों को असम निकाला देने के लिए आंदोलनकारियों के रूप में संघर्षरत विभिन्न संगठन बाद में राजनीतिक दलों में बदल गए, किंतु असम से अवैध बांग्लादेशियों के निष्कासन और प्रवेश निषेध की कोई व्यापक और कारगर युक्ति नहीं खोजी जा सकी।

यदि केंद्र सरकार द्वारा लाया गया नागरिकता संशोधन विधेयक, असम के संबंध में हाल ही में जारी एनआरसी में दर्ज अवैध बांग्लादेशियों, म्यांमारियों के आंकड़ों की चिंता करते हुए प्रस्तुत किया जाता और तब संसद से पारित होता तो यह राष्ट्र हित में प्रतीत होता। लेकिन ऐसा नहीं है। राजनेताओं को विचार करना चाहिए कि अति जनसांख्यिकीय विद्रूपताओं व विसंगतियों से पहले ही पीड़ित असम व देश में गैर-मुसलिम अल्पसंख्यक जनसंख्या के लिए भारतीय नागरिकता के रास्ते खोलना तब तक न भारतीय नागरिकों के हित में होगा और न ही गैर-मुसलिम अल्पसंख्यक प्रवासियों के, जब तक कि असम व देश से बांग्लादेशी, पाकिस्तानी, म्यांमारी व दूसरे देशों के करोड़ों अवैध प्रवासियों को बाहर नहीं कर दिया जाता। भारत पहले ही अति जनसंख्या की समस्याओं और इस कारणवश विभिन्न धार्मिक, जातिगत, सामाजिक व आर्थिक समस्याओं से घिरा है। ऐसी परिस्थिति में केंद्र सरकार को असम में अवैध तरीके से प्रवासित करोड़ों बांग्लादेशी मुसलमानों को वापस भेजने के संबंध में व्यापक क्रियात्मक नीति बनानी चाहिए। इसके लिए बांग्लादेश की सरकार के साथ हर आवश्यक संवाद, कूटनीति और अन्य उपाय किए जाने की आवश्यकता है।

असुरक्षित बुजुर्ग

दिल्ली में फिर एक बुजुर्ग दंपति की हत्या की घटना ने पुलिस के दावों की पोल खोल दी है। इस तरह की बढ़ती वारदातें पुलिस और समाज दोनों के लिए गंभीर चिंता का विषय हैं। शायद ही कोई महीना ऐसा बीतता हो जब घर में अकेले या परिवार के साथ भी रह रहे बुजुर्ग लोग अपराधियों का शिकार न बनते हों। हाल में ईस्ट ऑफ कैलाश जैसे पॉश इलाके में एक बुजुर्ग दंपति को उन्हीं की घरेलू सहायिका द्वारा मरवा डालने का मामला सामने आया है। आरोप है कि इस महिला ने अपने नाबालिग बेटे की मदद से वृद्ध दंपति की हत्या करवा दी और फिर लाखों रुपए के जेवर और नगदी लूट ली। मामले का पर्दाफाश कई दिनों बाद तब हुआ जब इस दंपति के अमेरिका में रह रहे बेटे ने फोन नहीं उठने पर अपने एक रिश्तेदार को मौके पर भेजा। चौंकाने वाली बात यह है कि इस घटना को कई दिन बीत चुके थे, लेकिन आस-पड़ोस, सोसायटी के सुरक्षा गार्डों और पुलिस तक को इसकी न तो भनक लगी, न ही किसी ने इस दंपति की इतने दिनों नहीं दिखने के बाद कोई खबर लेने की जरूरत समझी।

आज न सिर्फ दिल्ली, बल्कि ज्यादातर शहरों में स्थिति यही है कि जिन बुजुर्गों के बच्चे शहर से या देश से बाहर हैं, वे अकेले ही अपना जीवन गुजारने को मजबूर हैं। ऐसे परिवारों की तादाद दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। पढ़ाई-लिखाई के बाद बच्चे विदेश में बस जाते हैं, या फिर पारिवारिक मजबूरियों की वजह से उसी शहर में तो रहते हैं, लेकिन माता-पिता से अलग। ऐसे में बेसहारा बुजुर्ग अपने सेवादारों पर ही आश्रित हो जाते हैं। बुजुर्गों को निशाना बनाने वाले अपराधी ऐसे परिवारों पर नजर रखते हैं और मौका मिलते ही घटना को अंजाम दे देते हैं। पिछले कुछ सालों में तो इस तरह की घटनाओं में तेजी से इजाफा हुआ है। ज्यादातर मामलों में पकड़े गए लोगों में खास परिचित और घर में काम करने वाले ही शामिल पाए गए हैं। सवाल है कि ऐसे में किस पर भरोसा कर बुजुर्गों की सुरक्षा सुनिश्चित की जाए!

बुजुर्गों की सुरक्षा की पहली जिम्मेदारी आवासीय परिसर में तैनात सुरक्षा गार्डों और स्थानीय पुलिस की बनती है। लेकिन अब तक ऐसी जितनी भी वारदात का खुलासा हुआ है, उनसे लगता है कि न तो पुलिस ही अपनी जिम्मेदारी निभाती है और न आवासीय परिसरों के सुरक्षा गार्ड। उक्त घटना के संदर्भ में ही देखें तो करीब दस दिन तक किसी ने भी इस बुजुर्ग दंपति के बारे में जानने की कोशिश नहीं की। बुजुर्गों की सुरक्षा के लिए दिल्ली पुलिस में एक अलग सेल बना हुआ है। इस सेल में जो बुजुर्ग पंजीकृत होते हैं पुलिस समय-समय पर उनकी देखभाल का दावा करती है। यह दंपति भी इस बुजुर्ग सेल में दर्ज था। लेकिन दस दिन में किसी पुलिस वाले ने इनका हालचाल जानने की कोशिश नहीं की। पुलिस का दावा है कि वह घर-घर जाकर अकेले रह रहे बुजुर्गों से मिलती भी है। अगर ऐसा होता तो क्या दस दिन तक फ्लैट में इस दंपति की लाशें सड़ती रहतीं? जाहिर है, बुजुर्गों की सुरक्षा के जो ठोस इंतजाम होने चाहिए वे नहीं हैं और जिनके कंधों पर इनकी सुरक्षा की जिम्मेदारी है, वे लापरवाह हैं। ज्यादातर आवासीय परिसरों में भी सुरक्षा के पर्याप्त इंतजाम नहीं होते और इन्हें सुनिश्चित करना भी स्थानीय पुलिस की जिम्मेदारी होती है। अपराधी इस हकीकत को अच्छी तरह समझते हैं और इसका फायदा उठाते हैं। ऐसे में सवाल है कि बुजुर्गों की सुरक्षा किसके हवाले की जाए!

कल्पमेधा

क्षमा से बढ़ कर और किसी बात में पाप को पुण्य बनाने की शक्ति नहीं है।
-जयशंकर प्रसाद

मोह की नदी

पूनम पांडे

समाज, राष्ट्र और धर्म- सभी की अपनी एक नीति होती है, उसी प्रकार शक्ति का भी अपना एक नियम होता है। सागर में डूबने के बाद भी कोई चीज एक निश्चित गहराई से नीचे नहीं जा सकती। लेकिन मानव स्वभाव एकदम अलग है। यहां अगर नीचे गिरने की हद अगर पार की गई तो डूबना तय समझिए। यों आकांक्षा और स्वार्थपूर्ति पर ही यह सारा संसार टिका हुआ है, लेकिन एक नदी और भी है, जिसका नाम है त्याग और सादगी। इसके जल में मृगतृष्णा की काई कम ही जमती है। सुबह की रोशनी हो या फिर दोपहर की चमक या फिर सांझ की गोधूलि बेला, इस नदी में कभी भी मटमैलापन और धुंध की परत नहीं चढ़ती है।

महात्मा बुद्ध हमेशा कहा करते थे कि जीवन कभी भी एकरस और एकांगी नहीं होता। यह जीवन सांसों पर टिका है और सांसों का आना-जाना तब सार्थक माना जा सकता है, जब वे एक खुश और संतुष्ट मन के मालिक की दिनचर्या निर्धारित कर रही हों। समुचित दिवस का सुव्यवस्थित होना अच्छे मार्गदर्शन पर निर्भर करता है। जीवन की हर लहर पर किसी अच्छी संगति के हस्ताक्षर अवश्य परिलक्षित होते हैं। हमारी खुशी, उल्लास, तत्परता- सब उसी का प्रतिबिंब हैं।

निरंतर साधना और अपने अनुभव के खजाने को शिष्यों के लिए समर्पित सुकरात हर पल मननशील रहते थे कि जीवन क्या है और किसलिए है। कहते हैं कि सुकरात कृषकों से बहुत प्रभावित थे। कर्म को अपने जीवन का पर्याय मान चुके अनुशासन के साथ निरंतर गतिशील और सक्रिय किसानों को वे मन ही मन नमन करते थे। यों भी प्रतिदिन मेहनत करके रोटी पाने वाले में व्यावहारिक ज्ञान आदि बखूबी दिखाई देते हैं। एक और मजेदार बात सुकरात के बारे में अनगिनत जगह पर संदर्भ सहित कही जाती है कि वे हमेशा एक दर्पण साथ में रखते थे। बार-बार उसमें अपनी शक्ल देख कर संकल्प लेते रहते थे कि कहीं कुरूप चेहरे की तरह गुण भी रूप न खो बैठें। सुकरात हर क्षण उत्साहित और जाग्रत रहते थे।

दुनिया मेरे आगे

शांति निकेतन के संस्थापक गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर अपने वैभव संपदा से अछूते रहे। वे साधारण रहना पसंद करते थे और इस कहावत का अनुसरण करते थे कि ज्यादा के बगैर काम चल सकता है, मगर थोड़े के बगैर नहीं। कवि वड्र्सवर्थ का भी यही मत है कि अपने आप को एक सामान्य नागरिक की तरह महसूस करने से क्रियाशीलता में कभी कमी नहीं आती। यों भी किसी पुरस्कार को हासिल कर लेने से ज्यादा अच्छा लगता है उसके लिए संघर्षरत रहना। परिणाम से अधिक आनंद प्रयास में मिलता है।

यह सिलसिला युवा, वृद्ध महिला, पुरुष हरेक के लिए फायदेमंद है। देश भर में बुजुर्ग वर्ग की अहमियत को लेकर जो बहस चल रही है, उनका मुख्यधारा से अलग-थलग पड़ जाना, किसी महत्त्वपूर्ण मामले में उनकी राय जरूरी नहीं रह जाना। उनके व्यक्तित्व और उसके सामाजिक और मनोवैज्ञानिक पहलुओं को समझते हुए कुछ संस्थाओं ने शोध किए और त्वरित प्रश्नोत्तरी के बाद परिणाम यह मिला कि सिर्फ उन्हीं वर्ग के बुजुर्ग तन्हाई की पीड़ा से गुजर रहे थे, जिन्होंने युवावस्था में खुद को सामंजस्य स्थापित करने वाला नहीं बनाया। ऐसे रिश्ते नहीं संजोए, जिनसे कि आगे ढलती उम्र में वे सक्रिय हो सकते थे। ऐसे बुजुर्ग जो बदलते समाज और तकनीक से जुड़े रहे, सबसे घुलने-मिलने में प्रसन्न रहे, वे कभी अकेले नहीं रहे।

व्यवहार मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि अवसाद और तनाव से उपजी कुंठा आज के समय का दुखद सच है। ऐसे में हमारी पीढ़ी अच्छी पुस्तकें पढ़ कर अपने मनुष्य होने, अपनी सूझ-बूझ और विवेक को विकसित कर सकते हैं। आज का समय अनिश्चितता और तकनीक पर आश्रित होने का युग है। ये दोनों ही एक-दूसरे के विरोधी हैं। ऐसी अटपटी-सी हवा में जोश, जज्बे का सानिध्य किसी ऑक्सीजन से कम नहीं है। नाचना, पढ़ना, गुनगुनाना, खेलना आदि सदैव जोशीले रहने के मूल मंत्र हैं। तुरत-फुरत की हड़बड़ी-गड़बड़ी से इतर एक-दूसरे के साथ जुड़ने में थियेटर भी मददगार है। यह हमें सिखाता है कि स्वस्थ मनोरंजन, आमोद-प्रमोद, संस्कार, विलासिता, सादगी, सार्थक जीवन आदि की सही परिभाषा क्या है। वह हमें इनमें सही विकल्प चुनने में मदद करता है।

मन को तेज भागने वाला घोड़ा कहा गया है। इसकी लगाम कस कर पकड़नी होती है। तब जीवन की हर अवस्था ऊर्जा से लबरेज हो पाती है। यह भी सच है कि परिवर्तन कोई रातों-रात तो नहीं होते, हौले-हौले होते हैं। कुंवर नारायण चौरानबे साल की उम्र तक सक्रिय रहे। जीवन की हर सांस को वे कामधेनु कहते थे। उनकी कविताओं पर भारत ही नहीं, विदेशों में भी शोध किए जाते रहे हैं। उन्होंने जीवन का कैनवास प्रसन्नता के रंगों से सजाया था। विनोबा भावे अपने ओजपूर्ण भाषणों में सौ साल तक युवा रहने की बात कहते थे और उदाहरण बरगद के पेड़ का देते थे, क्योंकि वट वृक्ष भी इसी का प्रतीक है। उसके भीतर प्रकृति की मूल भावना 'धैर्य से बढ़ना' चरितार्थ होती है।

विषमता के विरुद्ध

दुनियाभर में अमीरों व गरीबों के बीच बढ़ती आर्थिक विषमताओं की खाई को लेकर ऑक्सफैम की ताजा रिपोर्ट ने चौंकाने वाले आंकड़े जारी किए हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि पूरी दुनिया के सिर्फ 26 अमीरों के पास इस समय इतनी संपत्ति है, जितनी दुनिया के 3.8 अरब लोगों के पास भी कुल मिलाकर नहीं है। यह स्थिति सिर्फ बाकी दुनिया की नहीं, भारत की भी है। हमारे देश के शीर्ष नौ अमीरों की संपत्ति पचास प्रतिशत गरीब आबादी की संपत्ति के बराबर है। ऑक्सफैम के मुताबिक देश की महज एक फीसद आबादी के पास कुल 51.53 फीसद संपत्ति है। जबकि भारत की 10 प्रतिशत आबादी के पास देश की कुल संपत्ति का 77.4 प्रतिशत हिस्सा है।

आय असमानता एक कल्याणकारी राज्य की सबसे बड़ी विडंबना है। आर्थिक असमानता देश में गरीबी और लोगों की निराशा में वृद्धि करती है। इसके कारण निजीकरण बढ़ने से शोषण को बढ़ावा मिलता है, कम मजदूरी मिलती है। कृषि सुधार लागू कर पाना और धन का पुनर्वितरण संभव नहीं हो पाता है। अमीरों के पास संपत्ति बढ़ने का मतलब उनके एक बड़े हिस्से का अनुत्पादक होकर अर्थव्यवस्था से बाहर हो जाना है। यह संपत्ति उपभोग, उत्पादन, रोजगार, विकास दर किसी को बढ़ाने में काम नहीं आती। समाज में बढ़ती गैर-बराबरी राज और समाज नीति पर धनी वर्ग का वर्चस्व स्थापित करती है। यह स्थिति कई नकारात्मक प्रवृत्तियों को पैदा करती है।

दुनिया भर के आर्थिक विशेषज्ञों में इस बात पर सहमति बढ़ रही है कि आर्थिक विकास अगर समावेशी नहीं है और उसमें टिकाऊ विकास के तीन जरूरी पहलू- आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरण- शामिल नहीं हैं तो वह गरीबी कम करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। इन्हीं चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए टिकाऊ विकास लक्ष्यों (एसडीजी) के दसवें लक्ष्य का उद्देश्य बढ़ती असमानता को कम करना है। अच्छी बात यह है कि एक समग्र रणनीति के तौर पर भारत सरकार विशेष रूप से जनधन-आधार-मोबाइल कार्यक्रम पर बल दे रही है जिसका उद्देश्य समावेशन, वित्तीय सशक्तीकरण और सामाजिक सुरक्षा को बढ़ावा देना है।

आर्थिक न्याय सामाजिक न्याय की नींव है। आर्थिक न्याय के बिना सामाजिक न्याय की कल्पना संभव नहीं है। वर्तमान में आर्थिक असमानता उस घुन की तरह है जो अंदर ही अंदर भारतीय समाज को खोखला बनाती जा रही है। इससे उबरने का सबसे बेहतर उपाय यही होगा कि वंचित वर्ग को अच्छी शिक्षा, अच्छा रोजगार उपलब्ध कराते हुए सुदूरवर्ती गांवों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ा जाए। इसके लिए सरकार को अपनी कल्याणकारी योजनाओं पर कहीं ज्यादा खर्च करना होगा। स्वास्थ्य और शिक्षा पर कहीं ज्यादा राशि आवंटित करनी होगी। अभी इन मदों पर हमारा देश बहुत कम खर्च करता है। भारत में वह क्षमता है कि नागरिकों को एक अधिकारयुक्त जीवन देने के साथ ही समाज में व्याप्त असमानता को दूर कर सकता है।

दरअसल, आय असमानता जब गंभीर रूप से उच्चतम स्तर पर पहुंच जाती है तो उदार आर्थिक सुधारों के लिए सार्वजनिक समर्थन कम हो जाता है। जबकि सत्य यह भी है कि कोई भी देश तेज आर्थिक विकास के बिना बड़े पैमाने पर गरीबी के खिलाफ जंग जीतने में कामयाब नहीं रहा है। इसलिए आर्थिक सुधारों की रूपरेखा कुछ ऐसे तय करनी होगी, जिससे कि आय असमानता को कम किया जा सके और देश में ऐसा नया आर्थिक माहौल विकसित किया जा सके जो रोजगार, आम आदमी और गरीबों की खुशहाली पर केंद्रित हो।

● *कैलाश एम बिश्नोई, जोधपुर*

चुनावी पासा

कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी ने 2019 के आम चुनाव को सामने देख अपना सबसे बड़ा पासा फेंकते हुए एलान किया है कि अगर उनकी सरकार बनी तो सभी गरीबों को न्यूनतम आमदनी की गारंटी दी जाएगी। आजादी के बाद से लेकर आजतक किसी पार्टी ने ऐसा वादा नहीं किया था। इस वादे का जमीनी स्तर पर लागू होना आसान नहीं है क्योंकि सबसे बड़ा सवाल है कि इतना पैसा आएगा कहां से? दरअसल, सत्ता से वंचित कांग्रेस अध्यक्ष किसी भी तरह सत्ता सुख वापस पाना चाहते हैं। इसलिए जनता के ट पाने के लिए वे ऐसे वादे कर रहे हैं जो हकीकत में चाहे पूरे न हों, पर उनकी सरकार बनवा दें! अच्छी बात यह है कि अब सभी पार्टियां इस तरह के लोकलुभावन वादे लेकर आएंगी!

● *बृजेश श्रीवास्तव, गाजियाबाद*

सबका साथ

कश्मीर घाटी में असर रखने वाले जिन राजनीतिक दलों को वहां का माहौल बदलने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए, वे ऐसा करने से बच रहे हैं। ये दल सत्ता में रहते समय अलग भाषा बोलते हैं और विपक्ष में रहते समय अलग। यह एक सच्चाई है कि भाजपा के साथ मिलकर सरकार बनाने और चलाने वाली पीडीपी की मुखिया इन दिनों मारे गए आतंकियों के परिवारों की मातमपुर्सी करने में लगी हुई हैं। स्पष्ट है कि राजनीतिक दलों का ऐसा रवैया भारत सरकार की माहौल बदलने वाली पहल को आगे नहीं बढ़ने दे रहा है। सुरक्षा बल राज्य और केंद्र सरकार की माहौल एवं मानसिकता बदलने वाली पहल का हिस्सा अवश्य हो सकते हैं, लेकिन वे यह काम केवल अपने बलबूते नहीं कर सकते। यह अच्छा है कि जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल ने साफ तौर पर कहा कि आतंकवाद बंदूक में नहीं, दिमाग में है, लेकिन सच को बयान करना भर पर्याप्त नहीं। अब जब आतंकियों को मुख्यधारा में लाने और उनके पुनर्वास पर विचार हो रहा है, तब ध्यान रखा जाए कि इस काम में राजनीतिक दलों सहित सबका सहयोग जरूरी है।

● *हेमंत कुमार, ग्राम/पोस्ट-गोराडीह, भागलपुर*

महिला बेरोजगारी

महिला सशक्तीकरण की नींव उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाकर ही रखी जा सकती है। लेकिन विडंबना है कि भारत में महिलाएं आर्थिक रूप से कमजोर होती चली जा रही हैं। हाल ही में आई सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकॉनॉमी (सीएमआइई) की रिपोर्ट के अनुसार पिछले साल बेरोजगार हुए लोगों में अट्ठासी लाख महिलाएं हैं। इनमें से पैंसठ लाख महिलाएं ग्रामीण और तेईस लाख शहरी क्षेत्रों में बेरोजगार हुई हैं। इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं के बेरोजगार होने से महिला सशक्तीकरण कार्यक्रमों को जबदस्त धक्का लगा है। आर्थिक स्वतंत्रता ही महिलाओं को वास्तविक सशक्तीकरण प्रदान कर सकती है इसलिए सरकार को महिलाओं के लिए रोजगार के अवसर बढ़ाने के बाबत प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है।

● *विशेक, दिल्ली विश्वविद्यालय*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com